अध्याय–4

4.1

शोध प्रश्न–4:– (क) 'नीति शिक्षा'' लोगों को किस आयुकाल में दी जाये? अर्थात्, यदि लोगों के किन्ही विशेष आयुकाल में 'नीति शिक्षा' दी जानी है, तो प्रत्येक आयुकाल में किस प्रकृति की 'नीति शिक्षा''दी जाये?

(ख) 'नीति शिक्षा''क्या किसी विशेष प्रकार की शिक्षा के साथ दी जाये? यदि हाँ, तो 'नीति शिक्षा'', किन विशेष प्रकारों की शिक्षा के साथ दी जाये और किस गहराई की हद तक दी जाये?

इस प्रश्न के उत्तर का एक अवश्यरूपेण आधार व अंग पूर्व अनुच्छेदों 3.1.2 तथा 3.1.4 के अंतर्गत नीति, शिक्षा,व नीति शिक्षा संबंधी वर्णन के अवलोकन किए जाने का अनुग्रह किया जाता है, क्योंकि उनका आंशिक रूप में भी पुनरावृत्ति करने की मनाही विश्वविद्यालय नियम में है।उक्त आधार के आगे का विवेचन व निष्कर्ष निम्न है।

बचपन से बच्चों के हृदय की वृत्तियों को ठीक तरह से मोड़ना चाहिये, बच्चों को शारीरिक श्रम लगने वाले उस उपयोगी उधोग में लगाया जाये जिससे उनका शरीर खूब कसा जा सके और उस उधोग में काम में आने वाले औजारों वगैरह की बनावट व कार्य करने के सिद्धान्तों आदि का ज्ञान हों, ताकि उनकी बुद्धि का विकास सहज हो जायें और लगातार बुद्धि की परीक्षा भी होती जाये। साथ–ही–साथ, गणितशास्त्र, भौतिक–विज्ञान, रासायनिक–विज्ञान, जीव–विज्ञान आदि को उनके कार्यों से जोड़कर ऐसे शस्त्रों/औजारों व विद्यायों का प्रासंगिक ज्ञान देना चाहिये तथा उनके मनोरंजन व आनन्द हेतु उच्च साहित्य का ज्ञान भी देना चाहिये। और इस प्रकार बच्चों का शारीरिक, बौद्धिक तथा आत्मिक ज्ञान शक्तियों का सन्तुलितरूप में विकास बड़े होने से पूर्व ही हो जाता है और मजबूत/स्थायी भी हो जाता है। और तीनों का समन्वित, सन्तुलित व स्थायी विकास होने से मनुष्य का मनुष्यत्व सिद्ध हो जाता है और बड़े होने पर वो अपने शरीर से आसानी से मेहनत का काम कर सकेंगे, सांसारिक चकाचौंध के चक्कर में न पड़कर अपनी इन्द्रियों पर पूर्व नियंन्त्रण रखने की दृढ़ क्षमता रखते हुए शुद्ध, शान्त और न्यायदर्शी बुद्धि से काम कर सकेंगे। यदि बड़े होने के पूर्व वो जब नीति पालन में अभ्यस्त हो चुके होते हैं और उसके पश्चात् वे जिस विशिष्ट शिक्षा को प्राप्त करते हैं, तो उसका वो कभी भी जीव–निर्जीव जगत व सृष्टि के हानि के लिये नहीं करेंगे। (गांधी, 1963)

प्रचलित शिक्षा प्रणाली, मनुष्य की बुद्धि के सर्वोतम अंश को विकसित करने वाली शिक्षा नहीं है, बल्कि बुद्धि का विलास है। यह तो सिर्फ सूचनाओं का इकट्ठा करना है। बुद्धि का सही और

व्यवस्थित विकास तो शुरू से ही दस्तकारियों द्वारा शिक्षा देने की प्रणाली से होता है और इस तरह से बौद्धिक शक्ति तो विकसित होती है, साथ में अप्रत्यक्ष रूप से आध्यात्मिक शक्ति की भी उससे रक्षा होगी। (गांधी, 1963)

शिक्षा से आशय है, बच्चे या मनुष्य की तमाम शारीरिक, मानसिक और आत्मिक शक्तियों का समावेशी तथा सम्पूर्ण विकास। अक्षरज्ञान न तो शिक्षा का आरम्भ है और न अन्तिम लक्ष्य। बच्चे की शिक्षा का प्रारंभ किसी दस्तकारी को सिखाने से करना चाहिये और उसी क्षण से बच्चों द्वारा कुछ निर्माण करना शुरू हो जाता है। (गांधी, 1963)

सात से चौदह वर्ष की उम्र के अन्दर उत्पादक श्रम द्वारा यदि बच्चे का मन और शरीर का विकसित होकर स्वावलम्बी नहीं बनें, तो इसका सीधा अर्थ होगा कि या तो स्कूल ठीक नहीं हैं या स्कूल के शिक्षक योग्य नहीं हैं। (गांधी, 1963)

भारतीय पारंपरिक शिक्षा व्यवस्था भी औपनिवेशिक शिक्षा व्यवस्था की ही तरह साक्षरता और उस तरह के ज्ञान की प्राप्ति पर जोर देती थी। गांधी जी पाठ्यक्रम में साहित्यिक, वैज्ञानिक, कलात्मक और रचनात्मक विषयों को निहित करने के पक्ष में थे किन्तु वह यह चाहते थे कि यह विषय आध्यात्मिक व जीविकोपार्जन दोनों ही लक्ष्यों की दृष्टिगत रखते हुए पढ़ाये जाने चाहिए, अर्थात् वे शिक्षा में भौतिक एवं आध्यात्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति वाला पाठ्यक्रम रचाना चाहते थे। उन्होने विषयों की सहसम्बद्धता तथा सम्पूर्ण पाठ्यक्रम के क्रिया प्रधान होने पर बल दिया। गांधी जी ने अपनी बेसिक शिक्षा में क्रिया प्रधान पाठ्यक्रम रखा जिसमें निम्नलिखित विषयों को स्थान दिया गया–

1. मातृभाषा 2. हिदुस्तानी व्यावहारिक गणित 3. सामाजिक विषय 4. स्वास्थ्य–विज्ञान 5. सामान्य–विज्ञान 6. आचरण की शिक्षा 7. संगीत 8. चित्रकला 9. हस्तकला एवं उधोग 10. क्रॉफ्ट–कृषि, गत्ते का कार्य, लकड़ी का कार्य, कताई–बुनाई आदि।

उनका मत था कि पाँचवी कक्षा तक बालक एवं बालिकाओं के लिए एक ही प्रकार का पाठ्यक्रम रहे। पाँचवी कक्षा के बाद बालकों को सामान्य विज्ञान तथा बालिकाओं को गृह विज्ञान पढाया जाना चाहिए। गांधी जी बच्चों को लिखने के पहले पढ़ना सिखाने के पक्ष में थे। वह चाहते थे कि बच्चों के अक्षर बहुत सुंदर बनें। (कोठे, 2005)

प्राचीन भारतीय भी इस बात को मानते थे कि शिक्षा देने की शुरूआत में विलम्ब करने से अच्छे परिणाम नहीं प्राप्त होते हैं। एक बच्चा जो सोलह वर्ष की अवस्था में पढ़ायी शुरू करता है, उससे गुरू को अच्छे परिणाम मिलने की सम्भावना नहीं होती हैं। बचपन में दिमाग कोमल व लचीला होता है, याददास्त तेज होती है और विचार की ग्रहणशीलता अधिक होती है, और इसलिये जीवन में बचपन की अवस्था ऐसी होती है जिसमें जीवनभर रह सकने वाली अच्छी–अच्छी आदतें बनाया जाना सम्भव होता है। इसीलिये प्राचीन भारतीय इस बात पर जोर देते थे कि शिक्षा बचपन में ही शुरू हो। एक विचारक का तो मत है कि जिस बच्चे की शिक्षा

को बचपन में अनदेखा किया जाता है उस बच्चे के माता–पिता स्वयं ही उस बच्चे के सबसे बड़े दुशमन होते हैं। यह माना गया है कि बच्चे के 5वें वर्ष की शुरूआत का समय प्राथमिक शिक्षा प्रारम्भ करने का उपयुक्त समय होता है और बच्चे के सात वर्ष की आयु प्राप्त करने पर (यानी आठवें वर्ष की शुरूआत पर)माध्यमिक शिक्षा का प्रारंभ करना उचित माना जाता है। मुस्लिम समुदाय में भी प्राथमिक शिक्षा को शुरूआत करने की बिस्मिल्लाह खानी संस्कार बच्चे की आयु के चार वर्ष पूर्ण करने के बाद पाचवें वर्ष के चौथे माह के चौथे दिन किया जाता है। (अल्तेकर, 1944)

उस आदमी ने सच्ची शिक्षा पाई है, जिसके शरीर को ऐसी आदत डाली गई है कि वह उसके बस में रहता है, जिसका शरीर चैन से और आसानी से सौंपा हुआ काम करता है। उस आदमी ने सच्ची शिक्षा पाई है, जिसकी बुद्धि शुद्ध, शांत और न्यायदर्शी है। उसने सच्ची शिक्षा पाई है, जिसका मन कुदरती कानूनों से भरा है और जिसकी इन्द्रियाँ उसके बस में हैं, जिसके मन की भावनायें बिल्कुल शुद्ध हैं, जिसे नीच कामों से नफ़रत है और जो दूसरों को अपना जैसा मानता है। ऐसा आदमी ही सच्चा शिक्षित (तालीमशुदा) माना जायगा, क्योंकि वह कुदरत के कानून के मुताबिक चलता है। कुदरत उसका अच्छा उपयोग करेगी और वह कुदरत का अच्छा उपयोग करेगा।(गांधी, 1949)

प्राथमिक शिक्षा का पाठयक्रम कम से कम सात साल का हो। इस अवधि में बच्चों को इतना सामान्य ज्ञान मिल जाना चाहिये, जो उन्हें साधारणतया दसवीं तक की शिक्षा में मिल जाता है और किसी उधोग को बच्चे सीख जाते हैं। (गांधी, 1963)

वर्णमाला तथा वाचन व लेखन से शिक्षा का आरम्भ करने से बच्चों की बुद्धि का विकास कुंठित सा हो जाता है। इसलिये बचपन में ही बुद्धि के विकास की मजबूत आधार–शिला रखने के लिये उन्हें वर्णमाला सिखाने से पहले, उन्हें इतिहास, भूगोल, मौखिक गणित तथा दस्तकारी की कला का प्रारम्भिक ज्ञान कराना चाहिये, तब बाद में वर्णमाला सिखाने का प्रयत्न करना चाहिये। यह प्रारम्भिक शिक्षा छः माह देने के बाद वर्णमाला सिखानी चाहिये और कुछ समय बाद बच्चों को सादा ड्राईंग बनाना, रेखागणित की शक्लें बनाना, चिड़ियों वगैरह के चित्र को बनाना सिखाना चाहिये। इससे बच्चों की हस्तलिपि अच्छी होगी। लेखन–कला एक ललितकला है। छोटे–छोटे बच्चों की बुद्धि पर वर्णमाला सिखाना शिक्षा की शुरूआत नहीं होती, बल्कि हम उसमें विकसित हो सकने वाली ललितकला का गला घोंट देते हैं। दूसरी तरह से देखें, तो सबसे पहले वर्णमाला सिखाना शुरू करने पर हम/शिक्षक/संरक्षक लेखन–कला के साथ हिंसा करते हैं और बच्चों के विकास का हनन करते हैं। (गांधी, 1963)

बच्चों को (लड़के–लड़कियों दोनों को) शिक्षा जहाँ तक हो सके ऐसे उधोग द्वारा दी जानी चाहिये, जिससे कुछ धन की आय भी हो। इस प्रकार की शिक्षा से बचपन से ही बच्चों में स्वावलम्बित बनने की आदत पड़ने लगती है और साथ ही उनमें उन सभी गुणों और शक्तियों

का पूरा विकास होता है जो एक स्त्री और पुरूष में होना चाहिये। इस प्रकार से सबसे पहले सीख देने पर बच्चे (लड़के व लड़कियॉ) जीवन–यापन के लिये जरूरी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये धन कमाकर स्वावलम्बित होकर पूर्ण मानव बनने की आधारशिला बना लेते हैं। (गांधी, 1963)

लेकिन दस्तकारी सिखाने का अर्थ यह नहीं है कि बच्चों को सिर्फ यांत्रिक क्रियायें ही सिखाना है, बल्कि बच्चों को प्रत्येक क्रिया का कारण और पूर्ण विधि भी सिखाना होता है। लिखने और पढ़ने से बच्चा जितना सीखता है, उससे दस गुनी अधिक जानकारी उसे इस तरह से सिखाने से होती है। यह भी ध्यान रखना है कि दस्तकारियों की जानकारी की शिक्षा सिर्फ कुछ बनाना सीखना ही नहीं है, बल्कि दस्तकारी द्वारा बच्चों का बौद्धिक विकास होना चाहिये। (गांधी, 1963)

एक और भी बात ध्यान में रखना चाहिये कि शिक्षा के स्वावलम्बी होने के साथ बच्चों के अन्दर के मनुष्य का सम्पूर्ण विकास भी वैज्ञानिक तरीके से उधोग सिखाने से होना चाहिये, तब ही वह सच्ची शिक्षा होगी। ऐसी शिक्षा बच्चों को देश के विकास के साथ जोड़ती है। (गांधी, 1963)

पश्चिम के असर के नीचे आकर हमने यह बात चलायी है कि लोगों को शिक्षा देनी चाहिये। लेकिन उसके बारे में हम आगे–पीछे की बात सोचते ही नहीं। सच्ची शिक्षा तो वह है जो शरीर और इन्द्रियों को वश में करना सिखाये। इसलिये प्रायमरी–प्राथमिक शिक्षा को लीजिये या ऊँची शिक्षा को लीजिये, उसका उपयोग मुख्य बात में नहीं होता। उससे हम मनुष्य नहीं बनते–उससे हम अपना कर्त्वय नहीं जान सकते। हमारे पुराने स्कूल ही काफी हैं। वहाँ नीति का पहला स्थान दिया जाता है। वह सच्ची प्राथमिक शिक्षा है। उस पर जो इमारत खड़ी करेंगे वह टिक सकेगी। (गांधी, 1949)

उपरोक्त वर्णन व विवेचन से स्पष्ट है कि न तो 'हिन्द–स्वराज', न ही 'मंगल–प्रभात' और न ही गांधी के शिक्षा पर विचार सम्बन्धी अन्य साहित्य में कहीं भी साफ–साफ शब्दों में लिखा पाया गया कि 'नीति शिक्षा' लोगों को अमुक आयुकाल में दी जाये। किन्तु इसी शोध प्रबन्ध में अनुच्छेद 3.1.2 से 3.1.4 में पहले वर्णन व विवेचन के आधार पर तथा इस अनुच्छेद में उपरोक्त वर्णन के आधार पर यह स्पष्ट है कि शिक्षा व नीति शिक्षा, दोनों का, का जिक्र बच्चों के सन्दर्भ में किया गया है ताकि वे मनुष्यत्व के धर्म व कर्म निभाकर पूर्ण मानव बनें। किन्तु नीति शिक्षा ऐसी नहीं है कि सिर्फ बच्चों को ही दी जा सकती है, यह बड़ों को भी दी जा सकती है। उपरोक्त अनुच्छेदों में जो व्यक्त किया गया है, उससे बहुत अच्छी तरह स्पष्ट है कि नीति शिक्षा, अर्थात् नीति को समझना तथा नीति नियमों का पालन करना, प्रत्येक बच्चे पर, किशोर पर व प्रौढ़ पर लागू है। अर्थात्, मनुष्यरूप में जन्म लेने के कारण जन्मजात धर्म/कत्वर्य (ईश्वरीय/सत्य प्रदत्त) प्रत्येक मनुष्य को नीति नियम का पालन करना अनिवार्य है, बाध्यता है,

कत्वर्य है, धर्म है। किन्तु, बच्चों का जिक्र नीति शिक्षा के सन्दर्भ में किये जाने का आशय सिर्फ यह है कि बचपन में दिमाग कोमल व लचीला होता है, याददास्त तेज होती है और विचार की ग्रहणशीलता अधिक होती है, और इसलिये जीवन में बचपन की अवस्था ऐसी होती है जिसमें जीवनभर रह सकने वाली अच्छी–अच्छी आदतें बनाया जाना सम्भव होता है। प्राचीन समय से इसको सच माना जाता रहा है।

शिक्षा देने के लिए उपयुक्त शारीरिक उम्र के बारे में भावे ने कहा है कि शिक्षण की सबसे उपयुक्त उम्र, बच्चे की सात वर्ष से चौदह वर्ष तक की उम्र है। हालाँकि इसको लचीला भी रखा है और उन्होंने कहा कि यह उपयुक्त समय अवधि बच्चे की 6 वर्ष की उम्र से 15 वर्ष तक की उम्र हो सकती है। कारण? उन्होंने कहा कि इस उम्र अवस्था में जो अनुभवयुक्त ज्ञान होता है वह बच्चेजल्दी भूलते नहीं है; जिस प्रकार एक बीज बोने से बहुत से बीज पैदा होते उसी तरह इस समय काल में दी गई विद्या हमेशा बढ़ती रहती है। जिस बच्चे ने इस तरह की विद्या पाई है वह आगे आने वाले जीवन में अपना ज्ञान सैकड़ों गुना ज्यादा बढ़ा लेगा।(भावे, 2010)

इसलिये यदि बचपन से ही बच्चों को सत्य व अहिंसा आदि नीति / नीति नियमों की शिक्षा दी जाती है तो उनमें उन नियमों की पालना की आदत आसानी से पड़ जायेगी और वह बड़े होने पर मानवधर्म निभाने में चूक नहीं करेंगे।

तो निष्कर्ष यह पाया कि नीति शिक्षा किसी को बच्चे/बड़े को, किसी भी आयुकाल में दी जा सकती है, किन्तु इसके सुनिश्चित फल को प्राप्त करने के लिये नीति शिक्षा मनुष्य–बाल्यावस्था से दिया जाना सर्वोचित है।

अब प्रश्न है कि किस आयुकाल में किस प्रकृति की शिक्षा दी जानी चाहिये?

नीति शिक्षा वर्तमान में प्रचलित पाठ्यक्रम आधारित/कक्षा आधारित शिक्षा की तरह नहीं है। नीति स्पष्ट है, ईश्वर/ सृष्टि/ अदृश्य शक्ति द्वारा सृष्टि परिचालन/सत्य/सत्याग्रह। और नीति नियम भी स्पष्ट हैं, अपरिग्रह, अस्तेय, सेवा, आत्मज्ञान, आत्मबलिदान, अहिंसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, नम्रता आदि (पूर्व में वर्णित अनुच्छेद 3.1.2 से 3.1.4 में व्यक्त हैं)। इन सभी का मानवजीवन में हर आयुकाल में हरक्षण अनुपालना की जा सकती है, प्रयोग किया जा सकता है। चूक होना स्वाभाविक है, भूल होना स्वाभाविक है किन्तु जहाँ भूल हुई वहीं से फिर सत्याग्रह व नियम पालना शुरू कर दें। नीति नियम पालना सिर्फ बातों से नहीं होती, इस पर लगातार चलना होता है, अभ्यास करते–करते उसकी आदत बनाते हैं जबतक कि पूर्ण मनुष्यत्व प्राप्त न हो जाये। रोज अपने से प्रश्न करना चाहिये कि आज जो–जो काम किये उनमें से कितनों में अहिंसा का पालन नहीं हुआ आदि।

अब प्रश्न है कि नीति शिक्षा और किसी विशेष प्रकार की शिक्षा का योग।

उपरोक्त वर्णन में व्यक्त किया गया है कि नीति शिक्षा वर्तमान में प्रचलित पाठ्यक्रम आधारित या कक्षा आधारित नहीं होती है। नीति शिक्षा में बच्चों को, या यदि बड़ा हो तो उसको भी, नीति नियमों के मुताबिक व्यवहार करना सिखाया जाता है। इस प्रकार के व्यवहार सिखाने में या व्यवहार सीखने वाले के सम्बन्ध कोई पूर्व योग्यता, कक्षा, विषय, व्यवसाय, स्टेट्स, गरीबी–अमीरी आदि निधार्रित नहीं होती है। नीति नियमों के अनुसार व्यवहार करने का अभ्यास बच्चा जन्म पाने के पश्चात् अपने घर से शुरू कर देता है और जीवन भर, जन्म से मृत्यु तक, करता रहता है। और इस बीच में आने वाले हर पडाव के साथ में नीति नियमों के व्यवहार का पालन करना अनिवार्य रहता है; इसके लिये अलग से समय की आवश्यकता नहीं होती है। अब प्रश्न है कि क्या बच्चों को प्रचलित शिक्षा प्रणाली में नीति शिक्षा के सम्बन्ध में कोई विशेष विषय निर्धारित किया जाये? इस सम्बन्ध में न तो हिन्द स्वराज और न ही मंगल प्रभात में लिखा है। किन्तु गांधी ने यह कहा कि नीति नियमों की अनुपालना तो बच्चे के जीवन में निरन्तर चलती रहती है। अक्षर ज्ञान की आवश्यकता हो, तो बच्चे एक–दूसरे या शिक्षक से सीख सकते हैं। किन्तु यदि गांधी के उस पाठ्यक्रम को देखें जिसका उन्होंने बेसिक शिक्षा के लिये समर्थन किया था, तो पाया जाता है कि 'आचरण की शिक्षा' नामक विषय पाठ्यक्रम में निर्धारित था।

अतः यह पाया जाता है कि 'नीति शिक्षा' नामक विषय स्कूली शिक्षा के दौरान हर कक्षा स्तर के लिये रखे जाने से नीति नियम की अनुपालना बच्चों द्वारा किये जाने को बल मिलेगा।

फिर प्रश्न है कि किस गहरायी तक 'नीति शिक्षा' विषय के अन्दर शिक्षा दी जाये?

इस प्रश्न के सम्बन्ध में यही पाया जाता है कि नीति/नीति के नियमों में उनके अन्दर गहरायी सम्बन्धी वर्ग नहीं है। आचरण नियम है, ये पूर्ण हैं और पूर्णरूप से अनुपालनीय है। इसलिये इन नीति नियमों को व्यवहार में अभ्यास से आदत में परिवर्तित करते रहने का निरन्तर अभ्यास करते रहना चाहिये, बच्चों के कार्य करने के तरीकों से उनकी समय–समय पर जाँच करते रहना चाहिये। और यह प्रक्रिया निरन्तर चलती रहना चाहिये।

4.2
शोध प्रश्न–5:क्या 'नीति शिक्षा' अध्यापन–प्रशिक्षणार्थियों के लिये भी है?

इस प्रश्न के उत्तर का एक अवश्यरूपेण आधार व अंग पूर्व अनुच्छेदों 3.1.2 तथा 3.1.4 के अंतर्गत नीति, शिक्षा,व नीति शिक्षा संबंधी वर्णन के अवलोकन किए जाने का अनुग्रह किया जाता

है, क्योंकि उनका आंशिक रूप में भी पुनरावृत्ति करने की मनाही विश्वविद्यालय नियम में है।उक्त आधार के आगे का विवेचन व निष्कर्ष निम्न है।

नीति शिक्षा' विषय प्रचलित शिक्षा प्रणाली में पाये जाने वाले विषयों से पूर्णतः अलग प्रकार का है। इसके शिक्षण की पद्धति वगैरह भी विशिष्ट होना चाहिये। शिक्षकों के गुण, गुणवत्ता व उनकी चाह भी लीक से हटकर होना चाहिये। किस प्रकार के शिक्षकों की आवश्यकता है, इस विषय पर गांधी का अपना दृष्टिकोण ग्राम स्वराज्य नामक पुस्तक में प्राप्त हुआ। गांधी के शिक्षकों के बारे में दृष्टिकोण बहुत स्पष्ट है। सब कुछ उन्होनें, अपने दृष्टिकोण की शिक्षा देने में लगने वाली आवश्यकताओं, बता दिया। शिक्षकों के बारे में गांधी के विचार निम्नलिखित हैं।

यदि हमें उस प्रकार के शिक्षक मिल जायें जैसे हमें नीति शिक्षा देने के लिये चाहिये, तो हमारे बच्चे श्रम–धर्म के गौरव को समझने लगेंगे और वे अपने बौद्धिक विकास का साधन और महत्वपूर्ण अंग भी मानने लगेंगें। साथ ही वे यह भी अनुभव करने लगेंगें कि वे जो शिक्षा प्राप्त कर रहें हैं, उसका मूल्य श्रम के रूप में चुकाना भी एक प्रकार की देश सेवा ही है। (गांधी, 1963)

बच्चों को शक्ति सम्पन्न और उन्नत बनाने का ख्याल किये बिना बच्चों के दिमागों में किताबी बातें ठूँसने में सारी ताकत लगाना उचित नहीं है; इस प्रकार से शिक्षा देना बन्द कर देना चाहिये। इसके स्थान पर बौद्धिक शिक्षा के प्रधान साधन की तरह हाथ–पैर के काम के जरिये बच्चों को उचित रूप से पूरी शक्ति से शिक्षा देनी चाहिये। (गांधी, 1963)

शिक्षा में जड़–मूल परिवर्तन होना ही चाहिये। दिमाग को हाथ द्वारा शिक्षा मिलनी चाहिये। विधार्थी अपने हाथों से कोई न कोई उधोग शिक्षा के अन्तिम पड़ाव तक करते रहें। (गांधी, 1963)

ऐसी शिक्षा देनी चाहिये जिससे बच्चे अच्छे–बुरे में फर्क जान सकें, अच्छे को ग्रहण करते रहें और बुरे को त्यागते रहें। (गांधी, 1963)

शिक्षक को उधोग सीख लेना चाहिये और अपने ज्ञान का अनुसन्धान उस उधोग के साथ करना चाहिये जिससे वह अपने मन–पसन्द किये हुए उधोग द्वारा यह सारा ज्ञान विद्याथिर्यों को दे सकें। और इसको सिखाते हुए शिक्षक अक्षर–गणित का, रेखा–गणित का, इतिहास–भूगोल का, अर्थशास्त्र का, कृषिशास्त्र का, राजनीति आदि का ज्ञान कराते रहें जिससे बच्चे अपने दिमाग और स्मरण–शक्ति पर अनावश्यक बोझ पड़े बिना ही बहुत शीघ्र ही बहुत ज्यादा ज्ञान हासिल कर लेंगे। (गांधी, 1963)

ऐसे शिक्षकों की आवश्यकता है जिनमें नव सृजन करने की और विचार करने की शक्ति हो, वास्तविक उत्साह हो और वास्तविक जोश हो और रोजाना विद्याथियों को क्या सिखायेंगे, यह सोचने की शक्ति हो। (गांधी, 1963)

शिक्षक को यह ज्ञान पुरानी पुस्तकों में नहीं मिलेगा। शिक्षकों को अपनी निरीक्षण और विचार करने की शक्ति का उपयोग करना आना चाहिये और उन्हें हस्त उधोग की मदद से वाणी द्वारा बच्चों को ज्ञान प्रदान करना आना चाहिये। (गांधी, 1963)

शिक्षकों को शिक्षण तरीकों में क्रान्ति लानी होगी। (गांधी, 1963)

शिक्षकों को उनके अपने दृष्टिकोणों में क्रान्ति लानी होगी। शिक्षकों को स्व–अश्रित होकर बिना अपने उच्च अधिकारियों की चाटुकारिता करते हुए और बिना अधिक धन की चाह रखते हुए बच्चों के शारीरिक बौद्धिक और आध्यात्मिक शक्तियों का सर्वतोमुखी विकास करने के ध्येय में अपने को लीन रखना होगा। (गांधी, 1963)

शिक्षकों को यह धारणा बनानी चाहिये कि उनको विद्याथियों को अच्छा मनुष्य बनाने में लगे रहना और इस कार्य में अपनी पूरी शक्ति लगाये रखने के कत्वर्यों का ही ध्यान रखना ही उनके लिये सब कुछ है। (गांधी, 1963)

निःसन्देह, ऐसे अध्यापकों को सृजित करना होगा; उन्हें नीति शिक्षा के अर्थ, उसकी उपयोगिता, उसके शिक्षण की विधि से अच्छी तरह से अवगत करना होगा; उन्हें सच्चे मानव का अर्थ तो बताना ही होगा, साथ में उन्हें अपने को खुद अच्छा, मनुष्य बनाकर अपने शिक्षार्थियों के समझ पेश करना होगा। (गांधी, 1963)

इस कार्य के लिये अध्यापक व्यवस्था में प्रवेश करने वाले व्यक्तियों को गहन प्रशिक्षण प्रदान करना होगा। (गांधी, 1963)

शिक्षकों के प्रति गांधी के विचार 'नीति शिक्षा' जैसे नवीन, किन्तु बच्चों को मानव बनाने के लिये अपरिहार्य, के लिये पूर्णतः उपयुक्त पाये जाते हैं।

'नीति शिक्षा''देने वाले शिक्षकों को स्वयं गांधी की दृष्टि की शिक्षा के सम्बन्ध में व्यक्त 'नीति' व नीति नियम को अच्छी तरह समझने वाला व उन पर चलने वाला होना चाहिये। ऐसे शिक्षकों को गांधी के उक्त नियम अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्वाद, अस्तेय, अपरिग्रह, अभय, अछूतपन मिटाना, शारीरिक मेहनत, नम्रता, स्वदेशी तथा सर्वधर्म–समभाव की पालना करना आना चाहिये। उक्त शिक्षकों में मर्यादा, संयम, चरित्रबल व विश्वासबल गुण होना चाहिये।

आजकल शिक्षक सत्ता के पीछे भागते हैं, राजनीति में भाग लेते हैं। आजकल का शिक्षक मजदूरों को अलग पढ़ाता है और शिक्षितों को अलग पढ़ाता है, स्त्रियों को अलग पढ़ाता है, पुरुषों को अलग पढ़ाता है। शिक्षक पढ़ाते क्या है, उनकी पाठशाला में काम करने वाले लोग तक को तो वह शिक्षा दे नहीं पाते। आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षकों को अपनी हैसियत समझनी चाहिए। शिक्षक नौकर की हैसियत से नहीं हैं; बल्कि शिक्षक तो वास्तव में समाज सुधारक, समाज दिग्दर्शक, व दार्शनिक हैं। आजकल 6 वर्ष का बच्चा उन शिक्षकों को सौंप

दिया जाता है जिसके पास कम–से–कम अनुभव है, कम–से–कम ज्ञान है और कम से कम वेतन पाने वाला है और ऐसे शिक्षकों को शिक्षकों के वर्ग में सबसे निकृष्ट श्रेणी का माना जाता है। जबकि चाहिएयह कि 6 साल का बच्चा शिक्षा के लिए उसे सौंपना चाहिए जिसके पास में ज्ञान भी हो और सिखाने की कुशलता भी हो, जिसकी तनख्वाह भी पर्याप्त हो, जिसका चरित्र उत्तम हो और जो अपने को नौकर न समझ कर एक सेवक व विद्यार्थी समझे।(भावे, 2010)

शिक्षक को अपनी शाला में काम करने वाले व्यक्ति को भी पढ़ा लिखा कर आगे बढ़ाना चाहिए और ऐसे व्यक्ति का स्तर बढ़ाते रहना चाहिए।(भावे, 2010)

इसी प्रकार नित्य ऐसे विद्वानों की पत्नियों को भी थोड़ा बहुत ध्यान देते रहना चाहिए, जिनकी पत्नियों को शिक्षा प्राप्त नहीं हुई है।(भावे, 2010)

शिक्षा का काम तो स्त्रियों को ही सौंपा जाना चाहिए। और स्त्री शिक्षकों को तैयार करना चाहिए। स्त्रियों को अन्य स्त्रियों की संस्थाओं से बाहर लाकर उन्हें छोटे बच्चों के शिक्षण कार्य में लगाना चाहिए। सबसे पहले माता शिक्षक होती है, उसके बाद में पिता शिक्षक होता है, और अंत में आचार्य शिक्षक होता है, ऐसा उपनिषदों में भी कहा गया है। कहने का तात्पर्य यह है कि स्त्रियों के हाथ में छोटे बच्चों को शिक्षित करने का दायित्व सौंपा जाए।(भावे, 2010)

शिक्षकों को अपने दिमाग को स्वतंत्र रखना चाहिए; उन्हें अपने मस्तिष्क को चारों ओर से बांधकर नहीं रखना चाहिए। शिक्षकों को पाठ्यक्रम व पाठ्यपुस्तक वगैरह से बंधा नहीं होना चाहिए। यदि शिक्षक पाठ्य–पुस्तकों व पाठ्यक्रम से बंधे रहेंगे तो, वो अपने मस्तिष्क को स्वतंत्र नहीं रख सकेंगे और परिणामस्वरूप समाज को जो उनसे मार्गदर्शन मिलना चाहिए, वो वे समाज कोनहीं दे पायेंगे तथाजो माता–पिता अपने बच्चों को जैसी शिक्षा दिलानाचाहते है, वैसी शिक्षा शिक्षक उन बच्चों को नहीं दे पाएंगे।

उक्त शिक्षकगणों में निम्न खूबियाँ होना चाहियेः– उक्त शिक्षकगणों को श्रम करके जीविका कमाने का गौरव मालूम होना चाहिये, किताबी ज्ञान पर विश्वास नहीं होना चाहिये, बच्चों को उनके गुणों के आधार पर किसी न किसी उद्यम में पारंगत बनाकर स्वावलम्बी बनाना आना चाहिये, उक्त शिक्षणगण को स्वयं भी अनेक उधोगों का ज्ञान व उसको करने में लगने वाले विज्ञान की जानकारी होना चाहिये और उसमें लगने वाले औजारों को बनाने का ज्ञान होना चाहिये और उसमें इस्तेमाल होने वाली सामग्री की विशेषताओं आदि का ज्ञान होना चाहिये ताकि उधोगों की शिक्षा देते हुए वो प्राकृतिक संसाधनों के बारे में जानकारी दे सके और अक्षरज्ञान, गणित, रेखागणित, इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, कृषिशास्त्र व राजनीति का ज्ञान बच्चों को देता रहे। इस तरह कि उनके दिमाग व स्मरण पर ज्यादा जोर पड़े बिना वो बहुत शीघ्र बहुत ज्यादा ज्ञान पा सकें। ऐसे शिक्षकगण मृदुभाषी होने चाहिये और उनको हमेशा इस कत्वर्य का ध्यान रहे कि उन्हे अपनी पूरी शक्ति लगाकर बच्चों को मानव बनाने में लगा रहना है। उक्त शिक्षकगण का सृजन करना होगा व उनको गहन प्रशिक्षण प्रदान करना होगा।

इस प्रकार शोधिकाने निष्कर्षस्वरुप यह पाया है कि नीति शिक्षा अध्यापन–प्रशिक्षणार्थियों को भी प्रदान करना चाहिये।